17 सितम्बर 2013, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे
जी-जागरण पर
प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 36, अंक : 12 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
सितम्बर (द्वितीय), 2013 (वीर नि. संवत्-2539) सह-सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

जयपुर में निश्चित विद्वान

दशलक्षण महापर्व के अवसर पर इस वर्ष 505 स्थानों पर 520 विद्वान निश्चित हुए हैं। जयपुर में भी विभिन्न स्थानों पर तत्त्वप्रचार हेतु विद्वान निश्चित किये गये हैं, जिनका वर्णन निम्नानुसार है -

श्री टोडरमल स्मारक भवन में प्रात: पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर व रात्रि में पण्डित परेशजी शास्त्री जयपुर द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर बड़े दीवानजी (राजस्थान जैनसभा)** में रात्रि में डॉ. भागचन्दजी शास्त्री जयपुर द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर तेरापंथियान, घी वालों का रास्ता** में प्रात: डॉ. श्रीयांसकुमारजी सिंघई जयपुर द्वारा, **श्री मुल्तान दिगम्बर जैन मन्दिर आदर्शनगर** में प्रात: पण्डित सोनूजी शास्त्री फिरोजाबाद व रात्रि में डॉ. नीतेशजी शाह डडूका द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर गायत्री नगर** में दोनों समय पण्डित विनयकुमारजी पापड़ीवाल द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर सेठी चैत्यालय सी-स्कीम** में रात्रि में पण्डित संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा द्वारा, **श्री महावीर पब्लिक स्कूल सी-स्कीम** में प्रात: पण्डित ऋषभजी शास्त्री द्वारा, **श्री महावीर दि. जैन उच्च माध्यमिक विद्यालय सी-स्कीम** में प्रात: पण्डित अभिषेकजी कोलारस द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर सिवाड़ बाकलीवाल** में रात्रि में पण्डित दीपकजी भिण्ड द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर जयजवान कॉलोनी** में रात्रि में पण्डित मनीषजी कहान द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर सेक्टर-17 प्रतापनगर** में रात्रि में पण्डित अनिलजी खनियांधाना द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर अग्रवाल फार्म** में रात्रि में डॉ. श्रीयांसजी सिंघई द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर सत्कार शॉपिंग सेन्टर मालवीय नगर** में रात्रि में पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ द्वारा, **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर खजांचीजी की नसियां** में रात्रि में पण्डित अभिषेकजी शास्त्री कोलारस द्वारा तत्त्वप्रचार किया जा रहा है।

दशलक्षण के विस्तृत समाचार आगामी अंक में प्रकाशित किये जायेंगे।

वेदी प्रतिष्ठा संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ जौहरी बाजार स्थित दि.जैन तेरापंथी बड़ा मंदिर में दिनांक 19 अगस्त को वेदी प्रतिष्ठा संपन्न हुई।

इस अवसर पर भगवान आदिनाथ एवं भगवान शीतलनाथ की प्रतिमाओं को जीर्णोद्धारित वेदी पर विराजमान किया गया। इस अवसर पर यागमंडल विधान के अतिरिक्त विधि विधान के समस्त कार्य डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा कराये गये।

सम्पादकीय -

सबै दिन जात न एक समान

- पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

जीवराज की कर्मकिशोर से बचपन से ही ऐसी घनिष्ठ मित्रता है, मानो उन दोनों का जनम-जनम से साथ रहा हो। जीवराज चेतन होकर भी अपने कर्तव्य पथ से भटका हुआ है और कर्मकिशोर जड़ होने पर भी अपने कर्तव्यपथ से कभी नहीं भटकता। वह अपने काम के प्रति पूरी तरह ईमानदार है, कर्तव्यनिष्ठ है। (ध्यान रहे, जीवराज जीव का प्रतीक है एवं कर्मकिशोर जड़कर्मों का प्रतीक है।)

यद्यपि जीवराज कर्मकिशोर का जनम-जनम का साथी है, दोनों में अत्यन्त घनिष्ठता है; **परन्तु जीवराज यदि कोई अपराध (पाप) करता है तो कर्मकिशोर स्वभाव के अनुसार उसे दण्ड देने से भी नहीं चूकता और यदि वह भले काम करता है तो कर्मकिशोर का सहोदर (पुण्यकर्म) उसे पुरस्कृत भी करता, उसका सम्मान भी करता है। और उसे लौकिक सुखद सामग्री दिलाने में कभी पीछे नहीं रहता।**

कोई कितना भी छुपकर गुप्त पाप करे अथवा भले काम करते हुए उनका बिल्कुल भी प्रदर्शन न करे तो भी कर्मकिशोर को पता चल ही जाता है। कहने को वह जड़ है; पर पता नहीं, उसे कैसे पता चल जाता है, उसके पास ऐसी कौनसी सी.आई.डी. की व्यवस्था है, कौनसा गुप्तचर विभाग सक्रिय रहता है, जो उसे जीव के सब अच्छे-बुरे (पुण्य-पाप) कार्यों की जानकारी दे देता है?

एकबार जीवराज ने कर्मकिशोर से पूछ ही लिया ''मित्र! तुम कैसे विचित्र हो? जो बिना ज्ञान के ही जीवों के गुप्त से गुप्त पुण्य-पापों का भी पता लगा लेते हो? उनके सभी शुभ-अशुभ भावों को न केवल पता लगा लेते हो, उनके पुण्य-पाप के अनुसार उन्हें दण्डित और पुरस्कृत करने की व्यवस्था भी कर देते हो? यह बात मेरी समझ

(शेष पृष्ठ 4 पर...)

(पृष्ठ 1 का शेष...)

में अभी तक नहीं आई। क्या तुम इसका रहस्य बताओगे ?''

कर्मकिशोर ने कहा - ''शुभाशुभ भावों के अनुसार दण्ड विधान करने से जानने न जानने का कोई सम्बन्ध नहीं है। जानने को तो सर्वज्ञ भगवान भी सबकुछ जानते हैं; परन्तु वे किसी को दण्डित व पुरस्कृत नहीं करते; क्योंकि वे वीतरागी हैं न! हमें भी कौनसा राग-द्वेष है, जो हम किसी का भला बुरा करें। अतः तुम्हारे शुभाशुभ परिणामों के अनुसार हम और तुम स्वतः लोह-चुम्बक की भाँति परस्पर बंध जाते हैं और हमारे उदय में अनुकूल-प्रतिकूल संयोग स्वतः ऑटोमेटिक-बिना किसी के मिलाये ही मिलते-बिछुड़ते रहते हैं।''

''वस्तुतः बात यह है कि तुम सब जीव स्वयं अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव और अपने कार्य की सीमाओं को भूलकर दुःखों के बीज बोते हो और अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारते हो। यदि तुम चाहो तो अपनी अनंतशक्तियों को पहचान कर, अपने स्वभाव की सामर्थ्य को जानकर हमारे बन्धन से मुक्त होकर सदा के लिए सुखी हो सकते हो। हम किसी को बिना कारण बन्धन में नहीं डालते। हमारा किसी से कोई वैर-विरोध तो है नहीं।''

कर्मकिशोर ने अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए आगे कहा - ''यद्यपि हमें दुष्ट कहकर कोसा जाता है। भोले भक्तों द्वारा भगवान से प्रार्थना की जाती है कि 'हे प्रभो! इन दुष्टकर्मों को निकाल दो और हमारी रक्षा करो'। हम पर यह मिथ्या आरोप लगाया जाता है कि 'हम जीवों को परेशान करते हैं।' हमारे विरुद्ध भजन बना-बनाकर ऐसा प्रचार किया जाता है कि -

कर्म बड़े बलवान जगत में पेरत हैं

एक भक्त ने तो यहाँ तक कह डाला -

मैं हूँ एक अनाथ, ये मिल दुष्ट घनेरे।
किये बहुत बेहाल सुनिये साहिब मेरे।।

जबकि वस्तुस्थिति इससे बिल्कुल भिन्न है। हमारा १४८ सदस्यों का बड़ा परिवार है, जो बिल्कुल निर्दोष है। जब जीव अपने में शुभाशुभ भाव करते हैं तो हम सहज ही जीवों की ओर खिंचे चले जाते हैं, इसमें हमारा क्या दोष है? फिर भी जीव हमें ही दोषी ठहराता है।''

जीवराज के पहले पूर्वभव में किए सत्कर्मों के फलस्वरूप कर्मकिशोर ने उसकी रुचि के अनुकूल सभी लौकिक सुख-सामग्री जुटाने में कोई कमी नहीं रखी। उसे किसी से राग-द्वेष तो है नही। जीवराज ने पूर्व में सत्कर्म किये थे तो उनका फल तो उसे मिलना ही था, सो मिला है। हम तो मात्र निमित्त हैं। इस कारण भी जीवराज को अपनी मनोकामनायें पूर्ण करने में कभी/कोई बाधा नहीं हुई। यद्यपि ये विषय भोगों की सब सुख सुविधायें भी पूर्वकृत सत्कर्मों के फलस्वरूप ही मिलती हैं, परन्तु उन प्राप्त भोगों में उलझ जाने से व्यक्ति का भविष्य अंधकारमय भी हो जाता है।

कर्मकिशोर ने कहा - ''जीवराज! यह विवेक तुमको नहीं था, इस कारण तुम विषयान्ध हो गये। पूर्व पुण्योदय से तुम्हारी समस्त भोग सामग्री और मनोनुकूल हमारी बहिन 'मोहनी' भी मिल तो गई; परन्तु उसमें उलझने से तुम्हारी जो दुर्दशा हुई, वह किसी से छिपी नहीं रही। तुम मोहनी के मोहजाल में फंस कर सातों व्यसनों में पारंगत हो गए। इसतरह तुम्हारी ही भूल से तुम्हारा सौभाग्य दुर्भाग्य में बदल गया। समता जैसी सर्वगुण सम्पन्न पत्नी के होते हुए भी तुम व्यसनों और विषय-कषायों के जाल में ऐसे फँसे कि निज घर की सुध-बुध ही भूल गए।

दिन-रात नृत्य-गान देखना-सुनना, सुरापान करना आदि तुम्हारी दिनचर्या के अभिन्न अंग बन गये। 'मोहनी' भी तुमसे इतनी आकर्षित हो गई कि उसने अपने पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आये दूसरों को सम्मोहित करने के धन्धे को तिलांजलि देकर अकेले तुमसे ही नाता जोड़ लिया। मोहनी के संसर्ग से तुम्हारी **ममता, माया, अनुराग, हास्य, रति** आदि अनेक अवैध संतानें हो गईं। वे सभी संतानें मोहनी जैसी माँ के कुसंस्कारों के कारण कुपथगामी होकर तुम्हारे गले का फन्दा बन गईं।''

जिस तरह पुण्योदय से प्राप्त मिष्ठान्न खाते-खाते पापोदय आ जाने से जीभ दांतों के नीचे आ जाती है, उसी तरह जीवराज के पूर्व पुण्योदय से प्राप्त भोगों को भोगते-भोगते पाप का ऐसा उदय आया कि उसकी दुनियाँ ही पलट गई।

किसी ने ठीक ही कहा है कि - **''सबै दिन जात न एक समान।''** विषयभोगों में मग्न सुख-सुविधा भोगी जीवराज के अल्पकाल में ही दुर्दिन आ गये। उसे अनेक रोगों ने घेर लिया। जवानी में ही जब यौवन क्षीण होने लगा और दुर्व्यसनों के कारण लक्ष्मी ने भी नाराज होकर मुँह मोड़ लिया तो मोहनी भी उसकी उपेक्षा एवं अनादर करने लगी।

अब तो जीवराज की स्थिति सांप-छछुंदर की तरह हो गई। कहते हैं कि सांप द्वारा छछुंदर का शिकार करते समय यदि वह छछुंदर उसके गले में अटक जाती है, तो उसके निगलने पर सांप का पेट फट जाता है और उगलने पर वह अंधा हो जाता है। यही दशा जीवराज की हो गई।

इन सब परिस्थितियों को देख-देख जीवराज अपने किए पर बहुत पछताया। अब उसे अपना भविष्य घोर अंधकारमय लगने लगा। वह किंकर्तव्य विमूढ़ सा हो गया और 'अब मैं क्या करूँ' इस सोच में पड़ गया।

यद्यपि इस दशा में उसे अपनी पूर्व पत्नी समता की बहुत याद आ रही थी; परन्तु वह यह सोचकर सहम जाता था कि ''अब मैं उसे अपना मुँह कैसे दिखाऊँ?'' इसप्रकार जीवराज को अपनी भूल

(शेष पृष्ठ 8 पर...)

सिद्धभक्ति

6 द्वितीय पूजन –डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

पाँचवाँ छन्द इसप्रकार है –

(त्रोटक छन्द)

निरआश्रित स्वाश्रित वासित हो, पर आश्रित खेद विनाशित हो।
विधि धार न हार न पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।५।।

आप निराश्रित हो अर्थात् किसी के आश्रित नहीं हो; परन्तु स्वाश्रित हो, स्वाधीन हो, स्वाश्रय में रहनेवाले हो; इसलिए पर के आश्रित रहने में जो खेद होता है, उस खेद का विनाश करनेवाले हो।

इस पंक्ति में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि पर का आश्रय लेनेवाले सदा खेदखिन्न ही होते रहते हैं। हे भगवन ! आपने अपने भगवान आत्मा का आश्रय लेकर पर के आश्रय से होनेवाला खेद का पूरी तरह अभाव कर दिया है। **अत: जिन लोगों को खेदखिन्न नहीं होना हो, वे स्वयं के भगवान आत्मा का आश्रय लें। सुखी होने का एकमात्र उपाय यही है।**

कर्मों को धारण न करनेवाले, उनसे हार न माननेवाले, संसार से पार पानेवाले सुख के कारण हे सिद्ध भगवान ! मैं आपको बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

छठवाँ छन्द इसप्रकार है –

(त्रोटक छन्द)

अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।६।।

हे भगवन् ! आप मूढ़ता से रहित हो, भूख-प्यास से रहित हो, सब प्रकार की दुविधाओं से रहित हो, अनेक विविधताओं से रहित हो, खोटी बुद्धि से रहित हो, अमृतमयी हो, केवलज्ञान से सहित हो और भली प्रकार सिद्ध हुए हो। कर्मरूपी जंगल को जलाने के लिए दावाग्नि हो। हे सुख के कारणरूप सिद्ध भगवान ! आपको बारम्बार नमस्कार हो।

इस छन्द में अष्ट कर्मों को भयंकर जंगल बताया गया है और हे भगवन्! आपको उस जंगल को जलानेवाला दावाग्नि कहा गया है।

तात्पर्य मात्र इतना ही है कि आपने कर्मों के जंगल को जला दिया है और आप उन कर्मों से मुक्त हो गये हैं।

सातवाँ छन्द इसप्रकार है –

(त्रोटक छन्द)

शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं।
तरनं भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।७।।

हे भगवन् ! जो आपके चरणों की शरण में आया, आपने उसका सबकुछ सही कर दिया है। जिसने आपके चरणों में अपना माथा रख दिया, आपने उसके मरण का हरण कर लिया, अमर बना दिया। आप स्वयं संसार सागर से पार उतर गये हो और भव्यों को भी पार उतारनेवाले हो। सुख के कारणरूप सब सिद्धों को मैं नमस्कार करता हूँ।

पहली पंक्ति में समागत साहित्यिक सौन्दर्य देखने लायक है। एक तो इस पंक्ति में एक भी अक्षर दीर्घ नहीं है, सभी ह्रस्व अक्षरों का प्रयोग किया गया है। दूसरे प्रत्येक शब्द का अन्तिम अक्षर एक ही है। इसप्रकार इसमें अन्त्यानुप्रास की छटा देखने योग्य है। ऐसा होने पर भी अर्थ करने में कोई कठिनाई नहीं है। कवि जो कहना चाहते हैं, वह सहज ही पाठक तक पहुँच रहा है।

आठवाँ छन्द इसप्रकार है –

(त्रोटक छन्द)

भववास तरास (त्रास) विनाशन हो, दुखरास विनास हुताशन हो।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।८।।

हे भगवन् ! आप संसार में रहने से होनेवाले त्रास को निवारण करनेवाले हो, दु:ख के ढेर का नाश करने के लिए हुताशन हो, दावाग्नि हो। हे भगवन् ! आप अपने दासों के दु:खों के निवारण करनेवाले हो। हे सुख के कारणस्वरूप सभी सिद्ध भगवान ! आपको बारंबार नमस्कार हो।

हे भगवन् ! यद्यपि आप तो सदा स्वयं में लीन रहनेवाले हो, आप किसी का कुछ भी नहीं करते – यह बात परमसत्य होने पर भी; जो व्यक्ति आपकी आराधना करते हैं, आपके द्वारा बताये गये मुक्तिमार्ग पर चलते हैं; उनके सांसारिक सुख-दु:ख नष्ट हो जाते हैं, अपार कष्ट मिट जाते हैं; **इसलिए व्यवहारनय से ऐसा कह दिया जाता है कि आप अपने अनुयायियों के त्रास के निवारक हों, दु:खों की राशि के दाहक हो।**

नौवाँ छन्द इसप्रकार है –

(त्रोटक छन्द)

तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूज लहै।
शरणागत 'संत' उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो।।९।।

हे भगवन् ! आपका ध्यान करते ही अनादिकालीन शाश्वत व्याधियाँ जल जाती हैं, नष्ट हो जाती हैं और तुम्हारी पूजा करते ही पूजन करनेवाले स्वयं पूज्य हो जाते हैं।

संत कवि कहते हैं कि आप शरण में आये हुए जीवों के उद्धार करनेवाले हो, शरणागतों को उभारनेवाले हो। सुख के कारणरूप

(शेष पृष्ठ 8 पर...)

(पृष्ठ 4 का शेष...)

समझ में आ जाने पर अपनी भूल को सुधारने का उपाय सोचने लगा।

समता बहुत ही सुशील, सरल स्वभावी, क्षमाशील, धैर्यवान और विवेकी नारी है। वह दूरदर्शी भी बहुत है। पति के ऐसे असह्य अक्षम्य अपराध करने पर भी वह विचलित नहीं हुई, क्रोधानल में नहीं जली। मोहनी जैसी पतिता नारी के प्रति ईष्यालु नहीं हुई। तत्त्वज्ञान के बल पर उसने स्वयं को तो संभाला ही, परिजनों को भी धैर्य बंधाया और जीवराज के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए यह सोचकर आशान्वित बनी रही कि **'परिणामों की स्थिति सदा एकसी नहीं रहती।'**

यद्यपि ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में विरले ही सहज-सामान्य रह पाते हैं; परन्तु उसके जीवन में यह धर्म का ही प्रभाव था, जिससे वह अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी सहज रह सकी; अन्यथा कषायों के वशीभूत होकर व्यक्ति कैसे-कैसे अनर्थ कर बैठता है, यह किसी से छुपा नहीं है।

समता को अपने दुःखमय जीवन से अधिक चिन्ता जीवराज के अमूल्य मानव भव के व्यर्थ बर्बाद होने की थी। अतः वह कामना करती थी कि किसी भी तरह इनकी ये दुष्प्रवृत्तियाँ दूर होना चाहिए और इन्हें आत्महित में लगना चाहिए; अन्यथा इनका यह अमूल्य मानव जीवन यों ही चला जायगा।'' कविवर दौलतरामजी ने ठीक ही कहा है -

'यह मानुषपर्याय, सुकुल सुनवो जिनवाणी।
इह विध गये न मिले, सुमणि ज्यों उदधि समानी।।

यदि यह मनुष्य पर्याय इसी तरह काम-भोग करते-करते बीत गयी तो पुनः मिलना असंभव नहीं तो महादुर्लभ तो है ही।'

यह पढ़ते-सुनते हुए भी सारा जगत मोहनींद में ऐसा बेसुध है कि उसे अपने हित की कुछ खबर ही नहीं है। **(क्रमशः)**

शोक समाचार

पण्डित गजेन्द्रकुमारजी भरतपुर के श्वसुर **श्री मुन्नालालजी जैन भिण्ड** का शांतपरिणामों पूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक हेतु 500/- रुपये प्राप्त हुये।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

(पृष्ठ 5 का शेष...)

ऐसे सभी सिद्धों को बारंबार नमस्कार करता हूँ।

पहली पंक्ति में समागत **तुम पूजत ही पद पूज लहे** - यह प्रयोग भी कम महत्त्व का नहीं है। इसमें इस तथ्य का उद्घाटन किया गया है कि **हे भगवन्! तुम इतने महान हो कि जो तुम्हारे चरणों की पूजा करता है; लोग उसकी पूजा करने लगते हैं।**

तात्पर्य यह है कि आपकी पूजा ही इतनी महान है तो फिर आपकी महानता का क्या कहना ?

जयमाला के अन्त में आनेवाला दोहा इसप्रकार है -

(दोहा)

सिद्धवर्ग गुण अगम हैं, शेष न पावैं पार।
हम किंह विधि वरणन करैं, भक्ति भाव उर धार।।१०।।

सिद्धभगवान के गुण अगम हैं। उनका पार पाने को शेषनाग भी समर्थ नहीं हैं। तो फिर हम उनका वर्णन कैसे कर सकते हैं? इसलिए हृदय में भक्तिभाव धारण करके ही संतोष कर रहे हैं।

हे भगवान्! आपके गुणों को हमारी अल्पबुद्धि द्वारा न तो पूरी तरह जाना ही जा सकता है और न उन्हें वाणी से व्यक्त ही किया जा सकता है। जब वे हमारे ज्ञानगम्य ही नहीं हैं तो फिर हम उनका वर्णन कैसे कर सकते हैं ?

जगत में कहा जाता है कि शेषनाग के हजार जिह्वायें होती हैं। जब वह हजार जीभोंवाला शेषनाग भी आपके गुणों के पार को नहीं पा सकता तो फिर हम क्या चीज हैं।

इसलिए अब हम तो अपने हृदय में आपके प्रति भक्तिभाव को धारण करके ही संतुष्ट हैं। ●

प्रकाशन तिथि : 13 सितम्बर 2013

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.द्वय (जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127